८. शास्त्रार्थ उदयपुर

सम्पादकीय

महर्षि के उदयपुर निवास के समय मौलवी अब्दुल रहमान सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस तथा जज अदालत उदयपुर के साथ स्वामीजी का यह शास्त्रार्थ हुआ शास्त्रार्थ लिखित रूप में हुआ था। **शास्त्रार्थ के विषय तथा तिथियां निम्नलिखित थीं—** ५

११ सितम्बर १८८२, सोमवार। विषय:- इलहामी पुस्तक कौन सी है? संसार के सब मनुष्य एक ही जाति के हैं वा कई जातियों के? मनुष्य की उत्पत्ति कब से है और अन्त कब होगा?

१३ सितम्बर, १८८२, बुधवार। विषय:—वेद किसकी रचना है? पुराण, मत की पुस्तक हैं या विद्या की? १०

१७ सितम्बर १८८२, रविवार। विषय:- वेद में अन्य धर्मों की पुस्तकों से क्या विशेषता है?

उपर्युक्त शास्त्रार्थ का उल्लेख ऋषि के भाद्रपद शुदि (?) सं० १९३९ के पत्र में भी मिलता है। पत्र में लिखा है—"यहां श्री महाराणा जी प्रतिदिन मिलते हैं और समागम करते हैं। और एक मौलवी से प्रश्नोत्तर प्रतिदिन होते हैं, और वे लिखे भी जाते हैं, सो तुम्हारे पास भेजेंगे"। १५

यह शास्त्रार्थ पं० लेखराम द्वारा संग्रहीत ऋषि के जीवन-चरित में अक्षरशः प्रकाशित हुआ है। उसके प्रारम्भ में लेखरामजी ने निम्न टिप्पणी लिखी है:— २०

["मुबाहिसा स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी और मौलवी अब्दुल रहमान सुपरिन्टेन्डेन्ट व जज अदालत उदयपुर, मुल्क मेवाड़।]

पं० ब्रजनाथ जी हाकिम सायर, मुल्क मेवाड़ (जो उस वक्त इस मुबाहिसा के लिखने वाले थे) ने बयान किया कि मैं उस वक्त स्वामी जी के दरमियान मुतर्जब (अनुवादक) भी था। अरबी के दकीक (क्लिष्ट) अल्फाजों का तर्जुमा स्वामी जी को और संस्कृत के दकीक अल्फाज का तर्जुमा मौलवी जी को बता दिया करता था। यह मुबाहिसा मैंने उस वक्त अपने हाथ से लिखा, जिसकी दो असल कापी मेरे पास पसिल से लिखी हुई अभी तक मौजूद हैं। २५ ३०

तीन आदमी इस मुबाहिसा के लिखने वाले थे । एक पं० ब्रजनाथ जी हाकिम सायर, दूसरे मिर्जा मोहम्मद खां वकील, हाल मेम्बर कौंसिल टोंक, तीसरे मुंशी रामनारायण जी सरिश्तेदार बागे कलां सरकारी, जिनमें से पहले और तीसरे
५ साहिबान की असल कापियां हमको मिली हैं, और जिनकी मौलवी साहब ने भी तस्दीक की। मगर उनकी दानाई और ईमानदारी पर अफसोस है। उस वक्त तो कोई माकूल जबाव न बन आया और न बाजे अजां, दिसम्बर १८८९ में बेबुनियाद और झूठे हवाले से कुछ का कुछ असल तहरीर के खिलाफ शाया करके अपनी दीन
१० दारी का शवोफां दिखलाया। इस मुबाहिसा के रोज सामईन हिन्दू मुसलमान खास आम की बहुत कसरत थी। यहां तक कि श्री दरबार वैकुण्ठवासी महाराज सज्जनसिंह जी भी मुबाहिसा समाअत फर्माने को तशरीफ फर्मा हुये थे।"

इस टिप्पणी के पश्चात् पं० लेखराम संग्रहीत जीवन-चरित में
१५ शास्त्रार्थ का पाठ प्रकाशित हुआ है, और अन्त में एक नोट इस प्रकार पुनः लिखा गया है—

"पण्ड्या मोहनलाल जी ने कहा कि मौलवी साहब के मुबाहिसा के अव्वल रोज तो राणासाहब नहीं आये थे,मगर उन्होंने मुबाहिसा तहरीरी होना मंजूर फरमाया था। आखिर रोज श्री हजूर तशरीफ
२० लाये थे, और मौलवी साहब की जिद्द देखकर दरबार ने इर्शाद फरमाया कि जो कुछ स्वामीजी ने कहा है वह बेशक ठीक है। फिर मुबाहिसा नहीं हुआ। कविराज श्यामलदास जो ने भी इसकी ताईद की"

पं० लेखराम संगृहीत् जीवन-चरित में उद्धृत होने के अतिरिक्त यह शास्त्रार्थ अभी तक पुस्तकाकार प्रकाशित नहीं हुआ है।
२५ देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय ने स्वसंगृहीत जीवन-चरित में इसका संक्षेप में उल्लेख किया है। यहां 'दयानन्द शास्त्रार्थ संग्रह' (कविराज रघुनन्दन सिंह निर्मल सम्पादित) से यह **शास्त्रार्थ-उदयपुर उद्धृत** किया जाता है।

शास्त्रार्थ-उदयपुर

स्वामी दयानन्द जी महाराज और मौलवी अब्दुर्रहमान साहब सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस तथा न्यायाधीश न्यायालय उदयपुर, मेवाड़ देश के मध्य में होने वाला शास्त्रार्थ]

११ सितम्बर १८८२, भादों बदी चौदस, सं० १९३९ सोमवार। ५

प्रथम प्रश्न—

मौलवी साहब:—ऐसा कौन सा मत है, जिसकी मूल पुस्तक सब मनुष्यों की बोलचाल और समस्त प्राकृतिक बातों को सिद्ध करने में पूर्ण हो ? जब बड़े-बड़े मतों पर विचार किया जाता है, जैसे भारतीय वेद, पुराण, या चीन वाले चीनी, जापानी, १० बर्मी बौद्ध वाले, फार्सी जिन्द [अवेस्ता] वाले, यहूदी तौरेत वाले, नसरानी इन्जील वाले, मौहम्मदी कुरान वाले, तो प्रकट होता है कि उनके धार्मिक नियम और मूल विशेष एक देश में एक भाषा के द्वारा एक प्रकार से ऐसे बनाये गये है, जो एक दूसरे से नहीं मिलते। और इन मतों में से प्रत्येक मत के समस्त गुण और १५ विशेष चमत्कार उसी देश तक सीमित हैं, जहां वह बना है। जिनमें से कोई एक लक्षण तथा चिह्न उसी देश के अतिरिक्त दूसरे देश में नहीं पाया जाता, प्रत्युत दूसरे देश वाले अनभिज्ञता के कारण उसे बुरा जानकर उसके प्रति मानवी व्यवहार तो क्या उसका मुख तक देखना नहीं चाहते। ऐसी दशा में सब मतों में से कौन-सा मत २० सत्य समझना चाहिये ?

स्वामी जी:—मतों की पुस्तकों में से विश्वास के योग्य एक भी नहीं, क्योंकि [वे सब] पक्षपात से पूर्ण हैं। जो विद्या की पुस्तक पक्षपात से रहित है, वह मेरे विचार में सत्य है। और ऐसी पुस्तक का साधारण प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध न होना भी २५ आवश्यक है। मैंने जो खोज की है, उसके अनुसार वेदों के अतिरिक्त कोई पुस्तक ऐसी नहीं है जो विश्वास के योग्य हो। क्योंकि समस्त पुस्तकें किसी न किसी देश विशेष की भाषा में हैं, और वेद की भाषा किसी देश की विशेष भाषा नहीं, केवल विद्या की भाषा है। क्योंकि यह विद्या की पुस्तक है, इसी कारण से किसी मत विशेष ३०

से सम्बन्ध नहीं रखती । यही पुस्तक समस्त देशीय भाषाओं का मूल कारण है[1], और पूर्ण होने से प्रसिद्ध भलाइयों तथा निषिद्ध बुराइयों की परिचायक है, और समस्त प्राकृतिक नियमों के अनुकूल है ।

५ **मौलवीः**—क्या वेद मत की पुस्तक नहीं है ?

स्वामीः—वेद मत की पुस्तक नहीं है,प्रत्युत विद्या की पुस्तक है ।

मौलवीः—मत का आप क्या अर्थ करते हैं ?

स्वामीः—पक्षपात सहित को मत कहते हैं, इसी कारण से मत की पुस्तक सर्वथा मान्य नहीं हो सकती ।

१० **मौलवीः**—हमारे पूछने का अभिप्राय यह है कि समस्त मनुष्यों की भाषाओं पर तथा समस्त मनुष्यों के आचार पर, और समस्त प्राकृतिक नियमों पर कौन-सी पुस्तक पूर्ण है ? सो आपने वेद निश्चित किया । सो वेद इस योग्य है वा नहीं ।

स्वामीः—हां है ।

१५ **मौलवीः** आपने कहा कि वेद किसी देश की भाषा में नहीं । जो किसी देश की भाषा नहीं होती, उसके अन्तर्गत समस्त भाषायें कैसे हो सकती हैं ?

स्वामीः—जो किसी देश विशेष की भाषा होती है, वह किसी दूसरी देश-भाषा में व्यापक नहीं हो सकती । क्योंकि उसी में बद्ध २० (सीमित) है ।

मौलवीः—जब एक देश की भाषा होने से वह दूसरे देश में नहीं मिलती, तो जब वह किसी देश की है ही नहीं, तो सब में व्यापक कैसे हो सकती है ?

स्वामीः—जो एक देश की भाषा है, उसका व्यापक कहना २५ सर्वथा विरुद्ध है । और जो किसी देश विशेष की भाषा नहीं वह सब भाषाओं में व्यापक है, जैसे आकाश किसी देश विशेष का नहीं है, इसी से सब देशों में व्यापक है । ऐसे ही वेद की भाषा भी किसी देश विशेष से सम्बन्ध न रखने से व्यापक है ।

मौलवीः—यह भाषा किसकी है ?

---

३० १. यही बात सत्यार्थप्रकाश और पूना-प्रवचन में भी कही है ।

स्वामी:—विद्या की।

मौलवी:—बोलने वाला इसका कौन है ?

स्वामी:—इसका बोलने वाला सर्वदेशी है।

मौलवी:—तो वह कौन है ?

स्वामी:—वह परब्रह्म है। ५

मौलवी:—यह किसको सम्बोधन की गई है ?

स्वामी:—आदि सृष्टि में इसके सुनने वाले चार ऋषि थे, जिनका नाम अग्नि, वायु, आदित्य अंगिरा था। इन चारों ने ईश्वर से शिक्षा प्राप्त करके दूसरों को सुनाया।

मौलवी:—इन चारों को ही विशेष रूप से क्यों सुनाया। १०

स्वामी:—वह चार ही सब में पुण्यात्मा और उत्तम थे ?

मौलवी:—क्या इस बोली को वह जानते थे ?

स्वामी—उस जनाने वाले ने उसी समय उनको भाषा भी जना दी थी, अर्थात् उस शिक्षक ने उसी समय उनको भाषा का ज्ञान दे दिया। १५

मौलवी:—इसको आप किन युक्तियों से सिद्ध कर सकते हैं ?

स्वामी:—विना कारण के कार्य कोई नहीं हो सकता।

मौलवी:—विना कारण के कार्य होता है या नहीं ?

स्वामी:—नहीं।

मौलवी:—इस बात की क्या साक्षी है ? २०

स्वामी:—ब्रह्मादिक अनेक ऋषियों की साक्षी है, और उनके ग्रन्थ भी विद्यमान हैं।

मौलवी:—यह साक्षी सन्देहात्मक और बुद्धि-विरुद्ध है। कारण कथन कीजिये।

स्वामी:—वेद की साक्षी स्वयं वेद से प्रकट है। २५

मौलवी:—इसी प्रकार सब मतवाले भी अपनी-अपनी पुस्तकों में कहते हैं।

स्वामी:—ऐसी बात दूसरे मतवालों की पुस्तकों में नहीं हैं, और न वह सिद्ध कर सकते हैं।

मौलवी:—पुस्तक वाले सभी सिद्ध कर सकते हैं। ३०

स्वामीः—मैं पहले से कह चुका हूं कि मतवाले ऐसा सिद्ध नहीं कर सकते, और यदि कर सकते हैं तो बताईये कि मोहम्मद साहब के पास कुरान कैसे पहुंचा ?

मौलवीः— जैसे चारों ऋषियों के पास आया।

नोटः—खेद है कि मौलवी साहब ने विना सोचे समझे ऐसा कह दिया। यह किसी प्रकार ठीक नहीं। न तो कुरान आदि सृष्टि में मोहम्मद साहब की आत्मा में प्रकाशित हुआ और न उसमें वर्णित कहानियां ही ऐसी हैं, जो आदि सृष्टि से सम्बन्धित हों, और न उसकी भाषा ही ऐसी है। मोहम्मद साहब और खुदा के मध्य में तीसरा जिबराइल और असंख्य फरिश्तों की चौकीदारी और पहरा और आकाश से उतरना आदि समस्त बातें ऐसी हैं जिनसे कोई मौहम्मदी भाई इन्कार नहीं कर सकता। इस लिये कुरान किसी प्रकार भी इस विशेषण का पात्र नहीं हो सकता, और उस्मान और कुरानों के बदलने की कहानी इसके अतिरिक्त है। —**सम्पादक**]

दूसरा प्रश्न—

मौलवीः—समस्त संसार के मनुष्य एक जाति के हैं, अथवा कई जातियों के ?

स्वामीः— जुदी-जुदी जातियों के हैं।

मौलवीः— किस युक्ति से ?

स्वामीः— सृष्टि के आदि में ईश्वरीय सृष्टि में उतने जीव मनुष्य-शरीर धारण करते हैं कि जितने गर्भ सृष्टि में शरीर धारण करने के योग्य होते हैं, और वह जीव असंख्य होने से अनेक हैं।

मौलवीः— इसका प्रत्यक्ष प्रमाण क्या है ?

स्वामीः—अब भी सब ही अनेक मां-बाप के पुत्र हैं।

मौलवीः—इसके विश्वसनीय प्रमाण कहिए।

स्वामीः— प्रत्यक्षादि आठों प्रमाण।

मौलवीः—वह कौन से हैं ?

स्वामीः—प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, संभव, अभाव।

मौलवीः—इन आठों में से एक-एक का उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए। **[इस प्रश्न का उत्तर नहीं है। कारण अज्ञात है]**

मौलवी:—यह जो आकार मनुष्यों के हैं, इनके शरीर एक प्रकार के बने अथवा भिन्न-भिन्न प्रकार के बने ?

स्वामी:—मुख आदियों में एक से हैं, रंगों में कुछ भेद हैं।

मौलवी:—किस-किस के रंग में क्या-क्या भेद है ?

स्वामी:—छोटाई-बड़ाई में किंचिन्मात्र अन्तर है। ५

मौलवी:—यह अन्तर एक देश अथवा एक जाति में एक ही प्रकार के हैं, अथवा भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं ?

स्वामी:—एक-एक देश में अनेक हैं। जैसे एक मां-बाप के पुत्रों में भी भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं।

मौलवी:—हम जब संसार की अवस्था पर दृष्टिपात करते हैं, १० तो आपके कथनानुसार नहीं पाते। एक ही देश में कई जातियां जैसे हिन्दी, हब्शी, चीनी इत्यादि देखने में पृथक्-पृथक् विदित होती हैं—अर्थात् चीन वाले दाढ़ी नहीं रखते और तिकौने मुंह के होते हैं। हब्शी, मलन्गई, चीनी तीनों की आकृतियां परस्पर नहीं मिलती। एक ही देश में यह भेद क्योंकर है ? १५

स्वामी:—उनमें भी अन्तर है।

मौलवी:—दाढ़ी न निकलने का क्या कारण है ?

स्वामी:—देश काल और मां बाप आदि के शरीरों में कुछ-कुछ भेद है। समस्त शरीर रज वीर्य्य के अनुसार बनते हैं। वात, पित्त, कफ आदि धातुओं के संयोग वियोग से भी कुछ-कुछ भेद होते हैं। २०

मौलवी:—हम समस्त संसार में तीन प्रकार के मनुष्य देखते हैं। जिनका विभाजन इस प्रकार है—दाढ़ी वाले, विना दाढ़ी के, घूंघरू बाल वाले। दाढ़ी वाले भारतीय, फिरंगी, अर्बी, मिश्री आदि। बेदाढ़ी वाले चीनी, जापानी, कैमिस्टका के। घूंघरू बाल वाले हब्शी। इन तीनों की बनावट और प्रकार में बहुत सा २५ भेद है। एक दूसरे से नहीं मिलता। और यह भेद आपके कथन अनुसार ऊपर वाले कारणों से है। यदि एक देश में रहने वाले यह तीनों प्रकार के मनुष्य दूसरे देश में जाकर रहें तो कभी भेद नहीं होता, जाति समान है। इस अवस्था में संसार के मूलरूप आपके कथनानुसार तीन हुये—अधिक नहीं। ३०

स्वामी:—भोटियों को किसमें मिलाते हैं। वह किसी से नहीं मिलते। इस प्रकार तीन से अधिक जाति विदित होती है।

मौलवी:—जैसा भेद इन तीनों में है वैसा दूसरे में नहीं। तीनों जातियों का परस्पर मिल जाना इस थोड़े भेद का कारण है परन्तु
५ इन तीनों की आकृति एक दूसरे से नहीं मिलती।

तीसरा प्रश्न—

मौलवी:—मनुष्य की उत्पत्ति कब से **है**, और अन्त कब होगा ?

स्वामी:—एक अरब छियानवे करोड़ और कितने लाख वर्ष
१० उत्पत्ति को हुये, और दो अरब वर्ष से कुछ ऊपर तक रहेगी।

मौलवी:—इसका क्या कारण और प्रमाण है ?

स्वामी:—इसका हिसाब विद्या और ज्योतिष शास्त्र से है।

मौलवी:—वह हिसाब बतलाइये ?

स्वामी:—भूमिका[1] के पहले अंक में लिखा है, और हमारे
१५ ज्योतिष-शास्त्र से सिद्ध हैं, देख लो।

[१३ सितम्बर **१८८२**, बुधवार, भादों सुदी एकम १९३९]

चौथा प्रश्न—

मौलवी:—आप धर्म के नेता हैं या विद्या के अर्थात् आप किसी धर्म के मानने वाले हैं, या नहीं ?

२० **स्वामीजी**:—जो धर्म विद्या से सिद्ध होता है, उसको मानते हैं।

मौलवी:—आपने किस प्रकार जाना कि ब्रह्म ने चारों ऋषियों को वेद पढ़ाया ?

स्वामी:—प्रदान किये गये वेदों के पढ़ने से और विश्वसनीय विद्वानों की साक्षी से।

२५ **मौलवी**:—यह साक्षी आप तक किस प्रकार पहुंची ?

१. अर्थात् ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के अङ्क में। इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण मासिक अंकों के रूप में छपा था। सम्पा०

स्वामी:—शब्दानुक्रम से और उनके ग्रन्थों से ।

मौलवी:—प्रश्नों से पूर्व परसों यह निश्चित हुआ था कि उत्तर बुद्धि के आधार पर दिए जायेंगे, पुस्तकों के आधार पर नहीं। अब आप उसके विरुद्ध ग्रन्थों को साक्षी देते हैं।

स्वामी:—बुद्धि के अनुकूल वह है जो विद्या से सिद्ध हो, चाहे वह लिखित हो अथवा वाणी द्वारा कहा जावे। समस्त बुद्धिमान् इसको मानते हैं, और आप भी ।

मौलवी:—इस कथन के अनुसार ब्रह्म का चारों ऋषियों को वेद की शिक्षा देना, विद्या अथवा बुद्धि द्वारा किस प्रकार सिद्ध होता है ?

स्वामी:—विना कारण के कार्य नहीं हो सकता, इसलिये विद्या का भी कोई कारण चाहिये ? और विद्या का कारण वह है कि जो सनातन हो। यह सनातन विद्या परमेश्वर में उसकी कारीगरी को देखने से सिद्ध होती है। जिस प्रकार वह समस्त सृष्टि का निमित्त कारण है, उसी प्रकार उसकी विद्या भी समस्त मनुष्यों की विद्या का कारण है । यदि वह उन ऋषियों को शिक्षा न देता, तो सृष्टि नियम के अनुकूल यह जो विद्या की पुस्तक है—इसका क्रम ही न चलता ।

मौलवी:—ब्रह्म ने वेद चारों ऋषियों को पृथक्-पृथक् पढ़ाया अथवा एक साथ क्रमशः शिक्षा दी अथवा एक काल में पढ़ाया ?

स्वामी:—ब्रह्म व्यापक होने के कारण चारों को पृथक्-पृथक् और क्रमशः पढ़ाता गया, क्योंकि वह चारों परिमित बुद्धि वाले होने के कारण एक ही समय में कई विद्याओं को नहीं सीख सकते थे। और प्रत्येक की बुद्धि-प्राप्ति की शक्ति भिन्न-भिन्न होने के कारण कभी चारों एक समय में और कभी पृथक्-पृथक् समझ कर एक साथ पढ़ते रहे। जिस प्रकार चारों वेद पृथक्-पृथक् हैं, उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य को एक-एक वेद पढ़ाया ।

मौलवी:—शिक्षा देने में कितना समय लगा ?

स्वामी:—जितना समय उनकी बुद्धि की दृढ़ता के लिये आवश्यक था[1] ।

---

[1] पूना-प्रवचन पृष्ठ ६० में 'पांच वर्ष' का संकेत है। सम्पा०

मौलवी:—पढ़ाना मानसिक प्रेरणा के द्वारा था अथवा शब्द अक्षर आदि के द्वारा, जो वेद में लिखे हुए हैं, अर्थात् क्या शब्द अर्थ सम्बन्ध सहित पढ़ाया ?

स्वामी:—वही अक्षर जो वेद में लिखे हुए हैं, शब्दार्थ सम्बन्ध ५ सहित पढ़ाए गये।

मौलवी:—शब्द बोलने के लिए मुख, जिह्वादि साधनों की अपेक्षा है। शिक्षा देने वाले में यह साधन हैं या नहीं ?

स्वामी:—उसमें यह साधन नहीं हैं, क्योंकि वह निराकार है। शिक्षा देने के लिये परमेश्वर अवयवों तथा बोलने के साधनादि से १० रहित है।

मौलवी:—शब्द कैसे बोला गया ?

स्वामी:—जैसे आत्मा और मन में बोला सुना और समझा जाता है।

मौलवी:—भाषा को जाने बिना शब्द किस प्रकार उनके मन १५ में आये ?

स्वामी:—ईश्वर के डालने से, क्योंकि वह सर्वव्यापक है।

मौलवी:—इस सारे वार्तालाप में दो बातें बुद्धि के विरुद्ध हैं। प्रथम यह कि ब्रह्म ने केवल चार ही मनुष्यों को उस भाषा में वेद की शिक्षा दी, जो किसी देश अथवा जाति की भाषा नहीं। दूसरे यह २० कि उच्चारित शब्द जो पहले से जाने हुए न थे।—दिल में डाले गए और उन्होंने ठीक समझे। यदि यह स्वीकार किया जावे, तो फिर समस्त बुद्धि विरुद्ध बातें जैसे चमत्कार आदि सब मतों के सत्य स्वीकार करने चाहियें !

स्वामी:—यह दोनों बातें बुद्धिविरुद्ध नहीं, क्योंकि यह दोनों २५ ही सच्ची हैं। जो कुछ जिह्वा से अथवा आत्मा से बताया जावे, वह शब्दों के बिना नहीं हो सकता। उसने जब शब्द बतलाये तो उनमें ग्रहण करने की शक्ति थी। उसके द्वारा उन्होंने परमेश्वर के ग्रहण कराने से अपनी योग्यतानुसार ग्रहण किया। और बोलने के साधनों की आवश्यकता बोलने और सुनने वाले के अलग (= दूर) अलग होने ३० पर होती है, क्योंकि जो वक्ता मुख से न कहे और श्रोता के कान न हों,

तो न कोई शिक्षा कर सकता है और न कोई श्रवण। परमेश्वर चूंकि सर्वव्यापक है, इसलिए उनके आत्मा में भी विद्यमान था, पृथक् न था।[1]

परमेश्वर ने अपनी सनातन विद्या के शब्दों को उनके अर्थात् चारों के आत्माओं में प्रकट किया और सिखाया। जैसे किसी अन्य देश की भाषा का ज्ञाता किसी अन्य देश के अनभिज्ञ मनुष्य को जिसने उस भाषा का कोई शब्द नहीं सुना—सिखा देता है, उसी प्रकार परमेश्वर ने जिसकी विद्या व्यापक है, और जो उस विद्या की भाषा को भी जानता था -उनको सिखा दिया। यह बातें बुद्धि-विरुद्ध नहीं। जो इनको बुद्धिविरुद्ध करे वह अपने दावे को युक्तियों द्वारा सिद्ध करे। पुराण जो पुरानी पुस्तकें हैं अर्थात् वेद के चार ब्राह्मण हैं-वह वहीं तक सत्य हैं जहां तक वेद के विरुद्ध न हों। और जो अठारह पुराण नवीन हैं जैसे भागवत, पद्मपुराणादि वह प्राकृतिक नियमों और विद्या के विरुद्ध होने से सत्य नहीं, नितान्त झूठे हैं।

मौलवी:—पुराण मत की पुस्तकें हैं या विद्या की ?

स्वामी:—वह प्राचीन पुस्तकें अर्थात् चारों ब्राह्मण विद्या की और पिछली भागवतादि पुराण मत की पुस्तकें हैं, जैसे कि अन्य मत के ग्रन्थ।

मौलवी:—जब वेद विद्या की पुस्तक है और पुराण मत की पुस्तकें हैं, और आपके कथनानुसार असत्य हैं, तो आर्यों का धर्म क्या है ?

स्वामी:—धर्म वह है जिसमें निष्पक्षता, न्याय और सत्य का स्वीकार और असत्य का अस्वीकार हो। वेदों में भी उसी का वर्णन है, और वही आर्यों का प्राचीन धर्म है। और पुराण केवल पक्षपात-पूर्ण सम्प्रदायों अर्थात् शैव, वैष्णवादि से सम्बन्धित है, जैसे कि अन्य मत के ग्रन्थ।

मौलवी:—पक्षपात आप किसको कहते हैं ?

स्वामी:—जो अविद्या, काम, क्रोध, लोभ, मोह, कुसंग से किसी अपने स्वार्थ के लिए न्याय और सत्य को छोड़कर असत्य और अन्याय को धारण करना है—वह 'पक्षपात' कहलाता है।

मौलवी:—यदि कोई इन गुणों से रहित हो, आर्य्य न हो, तो

---

१. इस विषय में पृष्ठ २४० पर टिप्पणी देखें।

आर्य्य लोग उसके साथ भोजन और विवाहादि व्यवहार करेंगे या नहीं ?

स्वामीः—विद्वान् पुरुष भोजन तथा विवाह को धर्म अथवा धर्म से सम्बन्धित नहीं मानते, प्रत्युत इसका सम्बन्ध विशेष रीतियों, देश तथा समीपस्थ वर्गों से है। इसके ग्रहण अथवा त्याग से धर्म की उन्नति अथवा हानि नहीं होती, परन्तु किसी देश अथवा वर्ग में रहकर किसी अन्य मत वाले के साथ इन दोनों कार्य्यों में सम्मिलित होना हानिकारक है, इसलिए करना अनुचित है।

जो लोग भोजन तथा विवाहादि पर ही धर्म अथवा अधर्म का आधार समझते हैं, उनका सुधार करना विद्वानों को आवश्यक है। और यदि कोई विद्वान् उनसे पृथक् हो जावे, तो वर्ग को उससे घृणा होगी और यह घृणा उसको शिक्षा का लाभ उठाने से वंचित रखेगी। सब विद्याओं का निष्कर्ष यह है कि दूसरों को लाभ पहुंचाना। और दूसरों को हानि पहुंचाना उचित नहीं।

(रविवार १७ सितम्बर १८८२; भादों सुदी पंचमी सं० १९३९)।

पांचवां प्रश्न—

मौलवीः—समस्त धर्म वाले अपनी धार्मिक पुस्तकों को सबसे उत्तम और उनकी भाषा को सर्वश्रेष्ठ कहते हैं, और उसको उस कारण का कार्य भी कहते हैं। जिस प्रकार की बौद्धिक युक्तियां वह देते हैं, उसी प्रकार आपने भी वेद के विषय में कहा। कोई प्रमाण प्रकट न किया, फिर वेद में क्या विशेषता है ?

स्वामीः—पहले भी इसका उत्तर दे दिया गया है कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों और प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध विषय जिन पुस्तकों में होंगे, वह सर्वज्ञ की बनाई हुई नहीं हो सकतीं। और कार्य का होना कारण के विना असम्भव है। चार मत जो कि समस्त मतों का मूल हैं, अर्थात् पुराणी, जैनी, इंजील तौरेत वाले किरानी, कुरानी—इनकी पुस्तकें मैंने कुछ देखी हैं और इस समय भी मेरे पास हैं। और मैं इनके बारे में कुछ कह भी सकता हूं, और पुस्तक भी दिखा सकता हूं। उदाहरणार्थः—पुराण वाले एक शरीर से सृष्टि का आरम्भ मानते हैं—यह अशुद्ध है, क्योंकि शरीर संयोगज है, इसलिए वह कार्य है, उसके लिए कर्ता की अपेक्षा है।

जिन्होंने इस कार्य को इस प्रकार सनातन माना है कि कोई इसका रचयिता नहीं, वह भी अशुद्ध है, क्योंकि संयोगज पदार्थ स्वयं नहीं बनता। इंजील और कुरान में अभाव से भाव माना है। यह चारों बातें उदाहरणार्थ विद्या के नियमों के विरुद्ध हैं, इसलिए इनकी वेद से समता नहीं कर सकते। वेदों में कारण से कार्य को माना है, और कारण को अनादि कहा है। कार्य को प्रवाह से अनादि और संयोगज होने के कारण सान्त बताया है। इसको समस्त बुद्धिमान् मानते हैं। मैं सत्य और असत्य वचनों के कारण वेद की सत्यता और मतस्थ पुस्तकों की असत्यता कथन करता हूं।

यदि कोई सज्जन इसको प्रकट रूप में देखना चाहें तो, मैं किसी दिन तीन घंटे के भीतर उन मतों की पुस्तकों को प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध सिद्ध करके दिखा सकता हूं। यदि कोई नास्तिक वेद में से प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध कोई बात दिखायेगा, तो उसको विचार करने के पश्चात् केवल अपनी अज्ञानता ही स्वीकार करनी पड़ेगी। इसलिए वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक हैं, न कि किसी मत विशेष की।

छठा प्रश्न—

मौलवी:—क्या प्रकृति अनादि है?

स्वामी:—उपादान कारण अनादि है।

मौलवी:—अनादि आप कितने पदार्थों को मानते हैं?

स्वामी:—तीन—परमात्मा, जीव और सृष्टि का कारण यह तीनों स्वभाव से अनादि हैं। इनका संयोग, वियोग, कर्म तथा उन का फल भोग प्रवाह से अनादि है। कारण का उदाहरण:—जैसे घड़ा कार्य, उसका उपादान कारण मिट्टी, बनाने वाला अर्थात् निमित्त कारण कुम्हार, चक्र दंडादि साधारण कारण, काल तथा आकाश समवाय कारण।

मौलवी:—वह वस्तु जिसको हमारी बुद्धि ग्रहण नहीं कर सकती, हम उसको अनादि क्योंकर मान सकते हैं?

स्वामी:—जो वस्तु नहीं है, वह कभी नहीं हो सकती, और जो है वही होती है। जैसे इस सभा के मनुष्य जो थे तो यहां आये।

यहां हैं तो फिर कहीं होंगे। बिना कारण के कार्य का मानना ऐसा है, जैसे वन्ध्या के पुत्र उत्पन्न होने की बात कहना। कार्य वस्तु से चारों कारण, जिनका ऊपर वर्णन किया है, पहले मानने पड़ेंगे। संसार में ऐसा कोई कार्य नहीं, जिसके पूर्वकथित चार कारण न हों।

मौलवी:—सम्भव है कि जगत् का कारण, जिसे आप अनादि कहते हैं, कदाचित् वह भी किसी अन्य वस्तु का कार्य हो। जैसे कि बिजली के बनने में कई साधारण वस्तुयें मिलकर ऐसी शक्ति उत्पन्न हो जाती है जो अत्यन्त महान् है। इस वार्तालाप के परिणाम से प्रकट है कि प्रत्येक वस्तु के लिए कोई कारण चाहिए। तो कारण के लिए भी कोई कारण अवश्य होगा।

स्वामी:—अनादि कारण उसका नाम है, जो किसी का कार्य न हो। जो किसी का कार्य हो उसको अनादि अथवा सनातन कारण नहीं कह सकते, किन्तु वह परम्परा और पूर्वापर सम्बन्ध से कार्य कारण नाम वाला होता है। यह बात सब विद्वानों को जो पदार्थ विद्या को यथावत् जानते हैं, स्वीकरणीय है। किसी वस्तु को चाहे जहां तक अवस्थान्तर में विभक्त करते चले जावें, चाहे वे सूक्ष्म हों चाहे स्थूल, जो उसकी अन्तिम अवस्था होगी–उसको कारण कहते हैं। और यह जो बिजली का दृष्टान्त दिया—वह भी निश्चित कारणों से होता है, जो उसके लिए आवश्यक हैं। अन्य कारणों से वह नहीं हो सकती।

सातवां प्रश्न—

मौलवी:—यदि वेद ईश्वर का बनाया होता, तो अन्य प्राकृतिक पदार्थों सूर्य, जल तथा वायु के समान संसार के समस्त साधारण मनुष्यों को उसका लाभ पहुंचना चाहिए था?

स्वामी:—सूर्यादि सृष्टि के समान ही वेदों से सब को लाभ पहुंचता है, क्योंकि सब मतों और विद्या की पुस्तकों का आदिकारण वेद ही हैं। और इन पुस्तकों में विद्या के विरुद्ध जो बातें है, वह अविद्या के सम्बन्ध से हैं। क्योंकि यह सब पुस्तकें वेद के पीछे बनी हैं। वेद के अनादि होने का प्रमाण यह है कि अन्य प्रत्येक मत की पुस्तक में वेद की बात गौण अथवा प्रत्यक्ष रूप से पाई

जाती है, और वेदों में किसी का खण्डन मण्डन नहीं। जैसे सृष्टि विद्या वाले सूर्यादि से अधिक उपकार लेते हैं, वैसे ही वेद के पढ़ने वाले भी वेद से अधिक उपकार लेते हैं, और नहीं पढ़ने वाले कम।

मौलवीः—कोई इस दावे को स्वीकार नहीं करता कि किसी काल में वेद को समस्त मनुष्यों ने माना हो। और न किसी मत की पुस्तक में प्रत्यक्ष अथवा गौण रूप से वेदों का खंडन मंडन पाया जाता है। ५

स्वामीः—वेद का खण्डन मण्डन पुस्तकों में है, जैसे कुरान में बेकिताब वाले और एक ऊती ईश्वर के मानने वाले, जैसे बाइबिल में पिता पुत्र और पवित्रात्मा, होम की भेंट, ईश्वर को प्रिय, याजक, महायाजक, यज्ञ, महायज्ञ आदि शब्द आते हैं। जितने मतों के पुस्तक बने हुए हैं, बीच के काल के हैं। उस समय के इतिहास से सिद्ध है कि मुसलमान, ईसाई आदि जंगली थे, तो जंगलियों को विद्या से क्या काम? १०

पूर्व के विद्वान् पुरुष वेदों को मानते थे, और वर्तमान समय में शब्द विद्या (फिलालोजी) के परीक्षक मोक्षमूलर आदि विद्वान् भी संस्कृत भाषा तथा ऋग्वेदादि को सब भाषाओं का मूल निश्चित करते हैं[1]। जब बाइबिल, कुरान नहीं बने थे, तब वेद के अतिरिक्त दूसरी मानने योग्य पुस्तक कोई भी नहीं थी। मनुष्य की उत्पत्ति का आदि काल ही ऋषियों की वेदप्राप्ति का समय है, जिसको १९६०८५२९९७ वर्ष हुए। इससे प्राचीन कोई पुस्तक नहीं है। १५ २०

पंडे मोहनलाल जी ने कहा कि मौलवी साहब के शास्त्रार्थ के प्रथम दिन तो राणा साहब नहीं आये थे, परन्तु उन्होंने शास्त्रार्थ लिखित होना स्वीकार किया था। अन्तिम दिन श्री महाराज पधारे और मौलवी साहब की हठ देखकर श्री दर्बार साहब ने कहा कि जो कुछ स्वामी जी ने कहा है वह निस्सन्देह ठीक है। फिर शास्त्रार्थ नहीं हुआ। कविराज श्यामलदास जी ने भी इसका समर्थन किया। २५

---

१. योरोप में जब संस्कृत भाषा पहुंची, तब प्रारम्भ में अनेक विद्वानों ने यही मत प्रकट किया, परन्तु कुछ काल पीछे यहूदी ईसाई मत के पक्षपात और राजनीतिक कारणों से योरोपियन भाषा-वैज्ञानिकों ने संस्कृत से पूर्व एक काल्पनिक भाषा की सत्ता स्वीकार करके संस्कृत और लैटिन आदि भाषा को बराबर का दर्जा दे दिया। ३०
—सम्पा०